डॉ. भावना

आद्या हॉस्पिटल, सीतामढ़ी रोड, जीरोमाईल, मुजफ्फरपुर

भाषाओं का चक्रव्यूह और हिन्दी ग़ज़ल

सोशल साइट्स हो या छोटी बड़ी पत्रिकाएँ अमूमन हर जगह एक बहस छिड़ी रहती है कि आखिर हिंदी ग़ज़ल है क्या? क्या देवनागरी भाषा में लिखी होने भर से कोई भी ग़ज़ल हिंदी ग़ज़ल हो जाती है या हिंदी ग़ज़ल का अपना कोई स्वरूप है ?बात तार्किक है, तो जवाब भी तर्क की कसौटी पर ही दिया जा सकता है ।कुछ लोग हिंदी ग़ज़ल में हिंदी शब्दों के कट्टर हिमायती हैं, तो कुछ लोग उर्दू फारसी के क्लिष्ट शब्दों के इस्तेमाल करने के बावजूद देवनागरी लिपि में लिख भर देने से इसे हिंदी गज़ल कहते हैं। अब सवाल यह उठता है कि हिंदी ग़ज़ल के पाठक हिंदी पढ़ने के लिए हिंदी की डिक्शनरी उठाए या उर्दू की डिक्शनरी? ग़ज़ल बहुत कोमल विधा है इसमें भाषायी दुरूहता , इसके सौंदर्य को नष्ट कर देती है। इतिहास साक्षी है कि वे ही शेर लोगों के जुबान पर हैं ,जो सीधे-सीधे उनके दिल में उतरने का माद्दा रखते हैं। दरअसल सरलता चाहे मनुष्य की हो या भाषा की लोग अंडरस्टीमेट कर ही लेते हैं। पर, यह सच है कि शायरी में सरल लिखना सबसे ज्यादा कठिन है। हिंदुस्तानी ग़ज़लें की भूमिका में कमलेश्वर कहते हैं कि" संस्कृति का लिखित रूप ही साहित्य होता है। ग़ज़ल संस्कृति के इसी घराने की सदस्य है और सबसे सुंदर सौगात है ।यह साहित्य की समन्वित होती सच्चाई की जीवंत विधा है ।"कोई विधा जब जीवंत होती है, तो उसमें लचीलापन होता है, कट्टरता तो बिल्कुल नहीं। पर यहाँ आलम यह है कि सभी 'अपनी डफली अपना राग' अलापने में लगे हैं। जबकि होना यह चाहिए कि अतिशय दुरुह हिंदी और उर्दू दोनों को लचीला रुख अपनाते हुए मध्यम मार्ग का रास्ता चुनना चाहिए। हिंदी कविता को पढ़ते हुए हमारे भीतर विचारों का कोलाज चलता है। हम कविता में शब्दों के लालित्य और वाग्जाल से अलग अपने समय की धड़कन सुनना ज्यादा पसंद करते हैं। भूमंडलीकरण, बाजारीकरण या वैश्वीकरण का सबसे ज्यादा हमला हमारी संवेदना पर हुआ है। हम मिट्टी से खेला करते थे, तो हमारे बच्चे मोबाइल से खेला करते हैं। परवरिश का यह रूपांतरण क्या ग़ज़ल के कथ्य से अछूता रह जाएगा? क्या ग़ज़ल प्रतीकों ,बिम्बों की चक्रव्यूह से हटकर अभिधा में बात करती हुई सपाट व कमजोर हो जाएगी? ऐसे ढेरों सवाल ग़ज़ल के नए लेखकों के मन में कसमसाते हैं, पर जवाब सही नहीं मिल पाता ! इसमें दो राय नहीं की ग़ज़ल 'गागर में सागर' भरने की कला है ।ग़ज़ल की दो पंक्ति यानी कि एक मिसरा पूरी कविता होती है। स्वाभाविक है यह सबसे मुश्किल विधा है। काफिया रदीफ का निर्वहन और और तुक भर मिला लेने से कोई

 ISSN:2583-8849

कविता ग़ज़ल नहीं बन जाती है। जां निसार अख्तर ऐसे ही नहीं कहते हैं कि 'हमसे पूछो कि ग़ज़ल क्या है ग़ज़ल का फन क्या है/ चंद लफ्जों में कोई आग छुपा दी जाए'। स्पष्ट है कि शब्दों में आग पैदा करना कोई आसान काम तो नहीं। 30 सितंबर 1975 को दुष्यंत का असामयिक निधन हो गया था। इसके बाद से अब तक ग़ज़ल ने 48 साल की यात्रा तय कर ली है। इन 48 सालों में हिंदी ग़ज़ल ने कथ्य, वैचारिकता ,सरोकार राजनीतिक चेतना, वैश्वीकरण, भूमंडलीकरण ,सामाजिक विषमता एवं सामाजिक जटिलताओं को समझा है एवं अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया है ।हिंदी ग़ज़ल अगर आज पाठकों की पहली पसंद है तो कहीं- न -कहीं उसकी संवेदना जनता के साथ पूरी तरह जुड़ी हुई है ।वह साहित्य जो जनता के हृदय को स्पंदित नहीं करता, वह स्वयं हाशिए पर चला जाता है। कहना न होगा कि हिंदी ग़ज़ल जनता की परेशानी को समझती है और उसके दुख- दर्द को अपने शेरों में ढालती है ।वह सिर्फ अपना दुख अपनी पीड़ा का अफसाना नहीं व्यक्त करती अपितु 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय' का वितान रचती है। कहानी और उपन्यास के बाद हिंदी ग़ज़ल सबसे अधिक पढ़ी जाने वाली विधा है ।स्वाभाविक है कि इसमें हिंदी कविता को पीछे छोड़ने का माद्दा है। निराला ने जब अपनी कविता' वह तोड़ती पत्थर/ इलाहाबाद के पथ पर' लिखी तो उन्हें यह एहसास हुआ था कि इस पीड़ा और भाव को अगर छंद में बाधेंगे ,तो शायद वह उतनी संप्रेषित नहीं हो पाएगी ।इसलिए उन्होंने रबर छंद की स्थापना की। साहित्य का उद्देश्य अपने समय को लिपिबद्ध करते हुए आने वाले समय की दुश्वारियों के प्रति सचेत करना है। कोई भी साहित्यकार अगर अपनी इन जिम्मेदारियों से दूर भागता है, तो समय से आँख चुराता है ।आज हिंदी ग़ज़ल की चुनौती उर्दू के पारंपरिक- सांस्कृतिक शब्दावली से मुक्त होने की है ।हिंदी ग़ज़ल की भलाई इसी में है कि सभी ग़ज़लकार आपसी रंजिश को भूलकर एक मत होकर काम करें। आज की ग़ज़ल व्यापक संप्रेषणीयता के साथ जनता से सीधे संवाद की मांग करती है। ज्ञान प्रकाश विवेक ने अपने संग्रह 'धूप के हस्ताक्षर' में स्वयं कहा है कि" हिंदी जबान में ग़ज़ल की लोकप्रियता इसलिए मिली कि इसमें संवेदनशीलता है, जो आम आदमी के अवसाद से तादात्म्य स्थापित करती है। आधुनिक कविता की जटिलता, सपाट बयानी पाठकों की अरुचि ने हिंदी कवियों को ग़ज़ल लिखने को उकसाया। ग़ज़ल अपनी कसावट और प्रेषणीयता के कारण हिंदी भाषा में खूब विकसित हुई ।" गौर करने वाली बात यह है कि ज्ञान प्रकाश विवेक हिंदी भाषा में कही गई ग़ज़लों की बात कर रहे हैं न कि हिंदी ग़ज़ल की । अब प्रश्न यह उठता है की ज्ञान प्रकाश विवेक जैसा समर्थ ग़ज़लकार हिंदी भाषा में कही गई ग़ज़ल जिसका स्वभाव, कथ्य, शिल्प ,प्रतीक बिम्ब व मुहावरे हिंदी के हैं , होने के बावजूद उसे स्पष्ट रूप से हिंदी ग़ज़ल कहने से क्यों कतरा रहे हैं?

कोई भाषा तभी ज्यादा समृद्ध होती है ,जब वह अपने भीतर दूसरी भाषा के शब्दों को समाहित करने की प्रवृत्ति रखती है ।भाषा का रुख हमेशा ही लचीला होता है। ज्ञान प्रकाश विवेक का यह शेर देखें-

यूँ अचानक काँच का टुकड़ा चुभा है पाँव में
अब तुम्हारे साथ थोड़ी दूर चल पाएंगे हम

इस शेर में काँच और पाँव का प्रयोग अद्भुत है।प्राजंलता ग़ज़ल की ताकत है। हिंदी ग़ज़ल को उर्दू, फारसी ,अंग्रेजी या आंचलिक भाषा के शब्दों के प्रयोग से परहेज बिल्कुल नहीं है। बस ,वह शब्द स्वभाविक रूप से वाक्य विन्यास में आए। एक कहावत है कि "झुकता वही है जिसमें जान होती है, अकड़ मुर्दों की पहचान होती है"। भाषाई अकड़ता अराजकता में बदल जाती है।क्लिष्ट फारसी और उर्दू से अलग होकर प्रांजल हिंदी समय की मांग है।अगर हमारे लेखन के केंद्र में आम जनता है तो पाठक वर्ग भी वही आम जनता होना चाहिए। क्या हम सिर्फ आलोचक और अकादमिक जगत को अचंभित करने के लिए लेखन में आए हैं? आलोचक जीवन सिंह ने अपने आलेख "हिंदी ग़ज़ल की प्रारंभिक जमीन" में लिखा है कि यदि दुष्यंत कुमार ग़ज़ल को अपने समय में लगे आपातकाल की राजनीतिक घुटन के विरुद्ध उसके यथार्थ से नहीं जोड़ते तो वे शायद ही ग़ज़ल में एक युग प्रवर्तक का काम कर पाते ।" मैं उनके इस कथन से बिल्कुल सहमत हूँ। साहित्य की कोई भी विधा जब तक अपने समय से नहीं जुड़ती है ,लोकप्रिय नहीं हो सकती। किसी भी विधा की लोकप्रियता उसकी ताकत है। रचना को दीर्घजीवी होने के लिए भाषा में सरलता और जनता से सीधा जुड़ाव होना आवश्यक है। ग़ज़ल और ग़ज़ल आलोचना से जब लोग परहेज कर रहे थे तब नचिकेता ने कारखाना के ग़ज़ल विशेषांक में लिखा है कि" जन सामान्य से सीधा संवाद और संपर्क करने की दिशा में ग़ज़ल भी एक अत्यंत कारगर और पुरअसर अभिव्यक्ति का माध्यम है ।अपने नदात्मक सौंदर्य और अंनुगूंजात्मक प्रभाव की वज़ह से यह पाठक और श्रोताओं की संवेदना के कोमल तंतुओं को झकझोर अनायास ही अपने प्रभाव में समेट लेने में सक्षम है। इसकी प्रभावी अंतर्वस्तु में शब्द संगीत के साथ-साथ भाव संगीत यानी अर्थ संगीत की अन्विति होती है।" यह अर्थ संगीत की अन्विति तभी संभव है जब ग़ज़ल का सीधा संवाद जन सामान्य से हो। कहना न होगा कि जन सामान्य भाषा की दुरूहता को सिरे से खारिज करता है। नया ज्ञानोदय का ग़ज़ल महाविशेशांक जनवरी 2013 में अजय तिवारी का एक आलेख जिसका शीर्षक है 'हिन्दी ग़ज़ल:सोचा था कुछ तो होगा ' ।इस आलेख में उन्होंने स्पष्ट कहा है कि " हिन्दी ग़ज़ल की मुख्य धारा बोलचाल की भाषा को अपनाकर चलती है और सामाजिक-सांस्कृतिक झुकाव हमेशा व्यवस्था विरोधी भले न होता हो,पर वह मूलतः सत्ता विरोधी है और जन साधारण की ओर अभिमुख है।"

किसी भी लेखक की भाषा उसके अध्ययन और परिवेश को व्यक्त करता है ।मुस्लिम बहुल्य क्षेत्र में रहने वाला हिंदू लेखक भी अपने परिवेश जनित संवाद की वज़ह से उर्दू मिश्रित भाषा का इस्तेमाल करता है। यह इस्तेमाल जानबूझकर नहीं बल्कि अकस्मात है ।वैसे ही जैसे बज्जिका भाषी कोई व्यक्ति अगर मैथिली या भोजपुरी या अंगिका भाषी लोगों के साथ जाकर रहने लगे, तो उसकी भाषा में मैथिली ,भोजपुरी या अंगिका का समावेश स्वाभाविक है ।"कोस- कोस पर पानी बदले, 10 कोस पर वाणी "बदलने जैसी मुहावरे का कुछ तो अर्थ होता ही होगा? ग़ज़ल के कुछ शेर में उर्दू फारसी के शब्द के इस्तेमाल भर कर लेने से हम उसे हिंदी ग़ज़ल से अलग बिल्कुल नहीं कर सकते। जैसे कोई कथाकार कहानी लिखने बैठता है ।उस कहानी के पात्र मुस्लिम या अंग्रेज हैं तो स्वाभाविक है कि पात्र के मुँह से जो कथन निकलेंगे उसमें उर्दू या अंग्रेजी का पुट होगा। सिर्फ उर्दू या अंग्रेजी के पुट होने भर से क्या हम उस कहानी को हिंदी कहानी से अलग कर देंगे? सवाल गंभीर है और उसके उत्तर उससे भी ज्यादा गंभीर!

भाषाई कट्टरता व्यक्ति की कट्टरता से कम दुखदायी नहीं। हिंदी ग़ज़ल दुष्यंत के देहावसान के 48 साल बाद भी इस तरह के प्रश्न से जूझ रही है, यह वाकई चिंता जनक है!